Yog ki Paribhashayen

Course - B.A./B.Sc. Yogic Studies
Paper - 1

Lesson presented by-

Dr. Prabhakar Devraj

Co-ordinator, Yogic Studies
E-mail - drpdevraj@gmail.com

इस पाठ के अंतर्गत हम योग के अर्थ के साथ–साथ योग की मान्य प्राचीन और आधुनिक परिभाषाओं की संक्षिप्त जानकारी प्राप्त करेंगे।

योग की परिभाषाएँ

योग शब्द का अर्थ :

व्युत्पत्ति (Etimology) : योग शब्द की उत्पति संस्कृत के 'युज' धातु से हुई है, जिसका अर्थ होता है जोड़ना, मिलाना या संयुक्त करना । योग में जोड़ने का तात्पर्य है आत्मा और परमात्मा का मिलना।

योग के विभिन्न मार्गों में इस एकत्व को अन्य रूपों में निरूपित किया गया है, परंतु सब का ध्येय एक है - परमात्मा का साक्षात्कार । विधियों के आधार पर उनमें भेद प्रतीत होता है । हठयोग में इड़ा और पिंगला एकत्व हो जाना, राजयोग में कैवल्य को प्राप्त करना, भक्तियोग में अपने आराध्यका साक्षात दर्शन हो जाना, ज्ञान योग में परम ब्रह्म का साक्षात्कार, कर्मयोग में कर्त्ता के रूप में हरि से विलय आदि, के रूप में योग को पारिभाषित किया गया है। इस प्रकार योग शब्द उस चरम लक्ष्य की प्राप्ति है जब आत्मा का मिलन परमात्मा से होता है, जिस प्रकार नदी की धारा समुद्र से मिलती है।

योग से संबंधित ग्रंथों की संख्या विशाल है। वेद तथा उपनिषदों से लेकर वर्तमान काल तक योग पर असंख्य पुस्तकें लिखी गई हैं।हम आज जिस रूप में योग का अध्ययन कर रहे हैं, वह मुख्यतः श्रीमद्भगवद् गीता तथा राजयोग पर आधारित है।

यहाँ हम योग के कुछ शास्त्रों में योग की परिभाषाओं का वर्णन करेंगे। द्रष्टव्य है कि भारतीय दर्शन के प्रमुख ग्रंथ संस्कृत भाषा में ही रचे गए हैं ।अतः छात्रों से यह अपेक्षित है कि वे थोड़ा संस्कृत सीखें।

राजयोग

राजयोग का मुख्य ग्रंथ 'योग दर्शन' है। योग दर्शन भारतीय दर्शन विज्ञान के प्रमुख छः दर्शनों में एक है। षड्दर्शन इस प्रकार हैं-

1. महर्षि गौतम का न्याय दर्शन
2. कणाद का वैशेषिक दर्शन
3. कपिल का सांख्य दर्शन
4. पतंजलि का योग दर्शन
5. जैमिनी का पूर्व मीमांसा दर्शन
6. बादरायण का वेदांत दर्शन

योग दर्शन के प्रणेता महर्षि पतञ्जलि हैं। योग दर्शन के सूत्र 'पातञ्जल योग सूत्र' के नाम से भी विख्यात है।

महर्षि पतञ्जलि ने योग को स्पष्ट रूप से इस प्रकार से पारिभाषित किया है :-

योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः। (साधन पाद, सूत्र- 2)

अर्थात् चित्त की वृत्तियों का निरोध ही योग है।

ये चित्त की वृत्तियां क्या है ? इन्हें समझने की शुरुआत हम इस प्रकार कर सकते हैं कि जैसे शांत झील में पत्थर डालने से लहरें उठती हैं, इसी प्रकार हमारा मन भी विभिन्न प्रकार के विचारों संवेगों आदि से उद्वेलित होता रहता है। ये विचार या संवेग आनंद के भी हो सकते हैं अथवा दुख के भी।

ऋषि ने लक्षणों के आधार पर पांच प्रकार की वृत्तियां बताई हैं -प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा तथा स्मृति। पांचों वृत्तियों के दो भेद होते हैं- क्लिष्ट तथा अक्लिष्ट । क्लिष्ट अर्थात क्लेश देने वाली । यह वृत्तियों का वह रूप है जो क्लेश देता है । यह साधक के लिए जीवन में दुख का कारण होता है और योग के मार्ग में बाधा पहुंचाता है। अक्लिष्ट वृत्तियाँ सहायक होती हैं ।वे दुखों का कारण नहीं बनती। एक योग साधक को क्लिष्ट वृत्तियों को पहचान कर योग द्वारा निरोध करना चाहिए ।

श्रीमद्भगवद्गीता

यह महर्षि व्यास रचित संस्कृत महाकाव्य 'महाभारत' का वह अंश है, जिसमें कृष्ण अर्जुन को निमित्त बनाकर पूरी मानवता को उपदेश देते हैं। महाभारत के युद्ध में स्वजनों को अपने विरुद्ध खड़ा देख अर्जुन के मन में मोह उत्पन्न होता है। वह युद्ध से विमुख हो रणक्षेत्र से भाग जाना चाहता है। अर्जुन की इस मनस्थिति को कृष्ण अपनी दिव्य वाणी द्वारा शांत करते हैं । इस प्रकार गीता भगवान कृष्ण का पावन संदेश है।

योग से सम्बंधित गीता के कुछ सूत्र यहाँ दिए जा रहे हैं :-

(1)योगस्थ: कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय |

सिद्धयसिद्धयो: समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते || (2/48)

कृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि तुम योग के अधीन होकर और आसक्ति को त्याग कर अपना कर्म करो ।

क्योंकि सिद्धि और असिद्धि में सम भाव रखना ही योग है।

मनुष्य सफलता में अत्यंत आनंद का अनुभव करता है तथा असफल होने पर दुखी हो जाता है । गीता के अनुसार सफलता तथा असफलता दोनों स्थितियों में समत्व भाव बनाए रखना ही योग है। सफलता मिलने पर अत्यंत आनंदित हो जाना तथा विफल होने पर दुःख में डूब जाना, यह मानसिकता जीवन के लिए अनुचित और अनुपयोगी है। इसी का फल है कि बहुत से लोग असफल हो जाने पर डिप्रेशन का शिकार हो जाते हैं । यहां तक कि आत्महत्या करने को भी उद्यत हो जाते हैं।

(2)बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते।

तस्माद्योगाय युज्यस्व योग: कर्मसु कौशलम्।। (2/50)

इसके द्वारा भगवान ने मानव जाति को यह बताया है कि योग की भावना से कर्म करना ही कर्म बंधन से छूटने का एकमात्र उपाय है । जो बुद्धियुक्त पुरुष हैं वे इसी लोक में पुण्य और पाप दोनों का त्याग कर देते हैं। इसलिए हे अर्जुन, तू समत्व रुप योग में लग जा, क्योंकि कर्मों में कुशलता ही योग है।

(3) युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु ।

युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दु:खहा ।। (6/17)

अर्थात् यथायोग्य आहार -विहार करने वाले, कर्मों में यथायोग्य चेष्टा करने वाले तथा उचित समय से सोने- जागने वालों के लिए योग दुखों का नाश करने वाला होता है।

आधुनिक योगियों के अनुसार योग की परिभाषायें :-

A. **श्री अरविंद** :

श्री अरविंद ने 'सुपर माइंड' अथवा 'अति मानस' की परिकल्पना की । उनके अनुसार व्यक्ति अपना मानसिक विकास उस स्तर तक कर सकता है, जहाँ वह स्वयं दैवी स्वरूप में परिवर्तित हो जाए। उनके अनुसार योग कठिन आसन व प्राणायाम का अभ्यास करना भर नहीं है । योग का अर्थ जीवन को त्यागना भी नहीं है । बल्कि दैवी शक्ति पर विश्वास रखते हुए जीवन की समस्याओं एवं चुनौतियों का साहस से सामना करना है। ईश्वर के प्रति निष्काम भाव से आत्म समर्पण करना तथा मानसिक शिक्षा द्वारा स्वयं को दैवी स्वरूप में परिणत करना ही योग की शिक्षा है।

B. **स्वामी शिवानन्द सरस्वती**

योग एक संपूर्ण जीवन है. यह कैसी विधि है जो मानव-प्रकृति के हर पक्ष को प्रभावित कर उसे संजीवनी प्रदान करती है। योग एक साधना प्रणाली का नाम है , जिसके द्वारा जीवात्मा तथा परमात्मा की एकाग्रता की अनुभूति होती है एवं परमात्मा तथा जीवात्मा का ज्ञान पूर्वक संयोग होता है।

C. **स्वामी सत्यानन्द सरस्वती**

योग हिमालय की गुफाओं तथा कंदराओं के ऋषि-मुनियों तक सीमित रहे , ऐसी विद्या नहीं है। योग तथा तंत्र के अंतर्गत अत्यंत वैज्ञानिक सिद्धियां हैं, जिनका उपयोग मानव मात्र के कल्याण के लिए वैज्ञानिक रूप से हो सकता है । योग की हर प्रविधि का विज्ञानसम्मत उपयोग वर्तमान की आवश्यकता है, जो मानव मात्र की सेवा में समर्पित हो। दीन-दुखियों की सेवा से बड़ा कोई योग नहीं है।

योग अतीत के गर्व में प्रसुप्त कोई कपोल कथा नहीं । यह वर्तमान की सर्वाधिक मूल्यवान विरासत है । यह वर्तमान युग की अनिवार्य आवश्यकता और आने वाली युग की संस्कृति है ।

आधुनिक संदर्भ में प्रासंगिकता

आधुनिक युग विज्ञान का युग है ।मनुष्य का जीवन अत्यंत साधन संपन्न हो चुका है । हम पूरी तरह बाह्य साधनों पर आधारित हैं।इसका फल है कि मनुष्य अपने इंद्रियों से प्राप्त आनंद से ही संतुष्ट है और कभी भी अपने अंदर झांकने का प्रयास नहीं करता । इस प्रकार बाह्यजगत तथा अंतर्जगत में असंतुलन की स्थिति पैदा हो गई है, जिसके कारण तनाव तथा विभिन्न प्रकार की बीमारियों का प्रकोप बढ़ रहा है। ये बीमारियाँ परिवार से लेकर वैश्विक स्तर तक फैल रही है। प्रकृति के साधनों का अधिकाधिक दोहन हो रहा है, जो अनेक उपद्रवों का कारण है । ऐसी स्थिति में मानव जाति को ऐसी विद्या की आवश्यकता है जो उसे शांति के मार्ग पर ले जा सके। साथ ही दवाओं का बढ़ता हुआ प्रयोग मनुष्य को शारीरिक रूप से अक्षम तथा कमजोर कर रहा है।

इस स्थिति में जब हम योग पर दृष्टिपात करते हैं तो पाते हैं की आज की स्थिति में यह विविध रूपों में मानव जीवन में सहायता कर सकता है। विशेष रुप से तनाव से मुक्ति में और जो विभिन्न उपद्रव प्रकृति तथा वातावरण में हो रहे हैं, उनको रोकने में ।

इस प्रकार विज्ञान की उन्नति के साथ योग की प्रासंगिकता तथा उसके उपयोग का महत्व और बढ़ता ही जा रहा है। हमने योग की जिन परिभाषाओं की चर्चा की है उनका अगर उनका अल्प मात्रा में भी पालन किया जा सके तो चमत्कार हो सकता है।

सम्भावित प्रश्न :-

a. प्राचीन ग्रंथों के आधार पर योग की परिभाषाओं का परिचय दीजिए ।
b. राजयोग के अनुसार योग की परिभाषा की पूर्ण व्याख्या कीजिए।
c. आधुनिक काल के ऋषियों के योग सम्बंधी विचारों की विवेचना कीजिए।आज के जीवन में उनकी क्या प्रासंगिकता है ?